# जेल नहीं बेल दीजिए

हाल ही में उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि किसी आरोपी को उसके खिलाफ आरोप लगने के बाद स्वतः ही जेल भेज दिया जाना गलत है। 'इनोसेन्ट टिल प्रूवेन गिल्टी' या दोषी साबित होने तक निर्दोष, महज एक नारा नहीं होना चाहिए। इस संदर्भ में न्यायालय ने कुछ तर्क दिए हैं, जो विचारणीय हैं –

- अभियुक्तों को स्वतः जेल भेजे जाने की प्रक्रिया संविधान द्वारा दिए गए व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार को कम करती है।
- यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जो पहले से ही बोझ से दबी जेल व्यवस्था पर दबाव डालती है।
- मामले को आगे बढ़ाने में साधनहीन व्यक्तियों के लिए यह एक निश्चित पद्धति बनी हुई है, चाहे फिर व्यक्ति दोषी हो या न हो।

- न्यायालय में आरोप लगाए जाने के बाद किसी आरोपी को जेल या न्यायिक या पुलिस हिरासत में रिमांड पर रखने का आदेश तभी दिया जाना चाहिए, जब आरोपी के भागने, सबूतों के साथ छेड़छाड़ करने, गवाहों को धमकाने या एक और अपराध करने का खतरा हो।

- आरोपी को जेल भेजने या बेल देने का निर्णय न्यायाधीश करता है। जेल भेजने के फैसले की स्थिति में यह महत्वपूर्ण है कि वह जमानत से इनकार करने के कारणों को दर्ज करे।

- न्यायालय ने यह भी कहा है कि यह सलाह केवल हाई-प्रोफाइल मामलों के अभियुक्तों पर लागू नहीं होनी चाहिए, बल्कि इसका दायरा देश के प्रत्येक नागरिक तक विस्तृत हो, चाहे इसके लिए न्याय प्रणाली के दृष्टिकोण की गहन समीक्षा शुरू करनी पड़े।

फिलहाल, देश में अपराध के जमानती होने या आरोपी के जांचकर्ताओं के साथ सहयोग करने की स्थिति में भी जेल भेजना, एक नियमित प्रक्रिया हो गई है। इस कारण आज भारत की जेलों में 3.5 लाख विचाराधीन कैदी हैं। जेलों की 70% जनता विचाराधीन कैदियों की है। उनमें से कई ने अपने अपराध की अधिकतम समय जेल की सजा काट ली होगी। कई कैदी तो बिना दोष के भी सजा काट रहे होंगे। अतः न्यायालय की भूमिका यहाँ सर्वोपरि हो जाती है कि उसे न्याय की सेवा करनी है या अन्याय का साधन बनना है?

**'द इकॉनॉमिक टाइम्स' में प्रकाशित संपादकीय पर आधारित।**

AFEIAS
Academy for Excellence